लेव तोलस्तोय

कोहकाफ़ का बंदी

'युद्ध और शांति' तथा 'आन्ना करेनिना' जैसे विश्वविख्यात उपन्यासों के लेखक लेव तोलस्तोय (१८२८—१९१०) के जीवन के अनेक वर्ष बाल-साहित्य की रचना और बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में बीते। अपने एक पत्र में उन्होंने लिखा था: "बच्चों और अध्यापन से मुझे गहरा लगाव है..." तोलस्तोय का जन्म अभिजात कुल में हुआ। वह काउंट थे, उनकी अपनी ज़मींदारी थी। अपनी जागीर यास्नया पल्याना में उन्होंने किसान बच्चों के लिए स्कूल खोला और वह स्वयं ही उसमें पढ़ाते थे। उन्होंने शैक्षिक पत्रिका 'यास्नया पल्याना' का प्रकाशन किया और १८७२ में अपनी प्रसिद्ध 'अक्षरमाला' लिखी, जिसके साथ 'पाठमाला' (रीडर) की चार पुस्तकें भी थीं।

इन पुस्तकों को लिखने के लिए तोलस्तोय ने विशेषत: प्राचीन यूनानी भाषा सीखी, अरबी और हिन्दी पढ़नी सीखी। अपनी 'पाठमाला' में उन्होंने शार्ल पेर्रो, ग्रीम बंधुओं और हांस एंडरसन की कथाओं, 'अलिफ़ लैला' की कथाओं और रूसी लोक कथाओं को अपने शब्दों में प्रस्तुत किया। तोलस्तोय दूसरे जनगण की आत्मिक सम्पदा से रूसी बच्चों को परिचित कराना चाहते थे। 'पाठमाला' की बहुत सी कहानियां उन्होंने स्वयं लिखीं, जिनमें 'कोहकाफ़ का बंदी' भी है। यह कहानी दिखाती है कि संसार के सभी लोगों में नेक भावनाएं होती हैं, तथा यह कि विभिन्न जातियों के बीच वैमनस्य, शत्रुता और युद्ध कितने निरर्थक और अमानवीय हैं।

तोलस्तोय के जीवन काल में ही उनकी 'अक्षरमाला' को रूस के जन विद्यालयों के लिए पाठ्य पुस्तक के रूप में स्वीकार किया गया। आज तक सोवियत संघ में सभी बच्चे 'कोहकाफ़ का बंदी' और तोलस्तोय की दूसरी कहानियां अवश्य पढ़ते हैं। जन शिक्षा की एक विलक्षण कर्मी, लेनिन की बहन आन्ना उल्यानवा ने लिखा था: "इन कहानियों को उनकी अन्य रचनाओं की ही भांति हमारे साहित्य की स्वर्ण निधि में स्थान मिलना चाहिए। किसी भी सच्ची कलात्मक रचना की भांति ये कहानियां पढ़कर सुख की अनुभूति होती है और इनका अकृत्रिम, सादगी भरा आकर्षण छोटी उम्र से ही सचेत पठन-पाठन की इच्छा जगाता है।"

(१)

एक था साहब। उसका नाम था झीलिन। वह फ़ौज में अफ़सर था और काकेशिया में तैनात था।

एक दिन उसे घर से चिट्ठी मिली। बूढ़ी मां ने लिखा था : "बेटा, मैं तो अब बिल्कुल बूढ़ी हो चली। मरने से पहले बस एक बार अपने आंख के तारे को देखना चाहती हूं। आ जाओ बेटा, अपनी मां से विदा ले लो। मुझे दफ़नाके फिर से फ़ौज में नौकरी करने चले जाना। मैंने बहू भी देख रखी है : समझदार है, सुंदर है और अपनी जागीर भी है उसकी। तुम्हें पसंद आ जाए, तो शादी-ब्याह भी हो जाए, फिर तो फ़ौज में लौटने की भी ज़रूरत न रहे।"

झीलिन सोच में पड़ गया। मां सचमुच ही बहुत बूढ़ी हो गई थी, ज़िंदगी का कोई भरोसा नहीं, जाने फिर मिलना हो न हो। क्यों न चला जाए, और अगर लडकी अच्छी है, तो शादी भी की जा सकती है।

तब वह कर्नल के पास गया, उनसे छुट्टी ली, साथी अफ़सरों से विदाई

ली, अपने सिपाहियों को चार बाल्टियां वोद्का की दीं और चलने को तैयार हो गया।

काकेशिया में तब लड़ाई चल रही थी। रात हो या दिन रास्ते पर चलना ख़तरे से ख़ाली नहीं था। कोई रूसी पैदल या घोड़े पर ही क़िले से थोड़ी दूर निकल जाता, तो तातार उसे मार डालते या पकड़कर पहाड़ों में ले जाते। सो यह क़ायदा था कि हफ़्ते में दो बार एक क़िले से दूसरे क़िले में गारद के साथ काफ़िला जाता था। आगे-पीछे सिपाही चलते थे और बीच में लोग।

गर्मियों के दिन थे। सुबह-तड़के क़िले के बाहर काफ़िला जमा हो गया, गारद के सिपाही आए और सब चल दिए। झीलिन घोड़े पर जा रहा था और उसका सामान गाड़ी पर लदा हुआ काफ़िले के साथ आ रहा था।

अठारह मील का रास्ता था। काफ़िला धीरे-धीरे बढ़ रहा था। कभी सिपाही रुक जाते, कभी काफ़िले में किसी की गाड़ी का पहिया उतर जाता या घोड़ा अड़ जाता और सबको रुककर इंतज़ार करना पड़ता।

दोपहर हो चुकी थी, पर काफ़िला अभी आधा रास्ता ही तय कर पाया था। चिलचिलाती धूप थी, धूल उड़ रही थी। कहीं शरण लेने की जगह नहीं, चारों ओर स्तेपी थी, न कोई पेड़, न झाड़ी।

झीलिन थोड़ा आगे बढ़ गया और रुककर इंतज़ार करने लगा कि कब काफ़िला आए। तभी उसे बिगुल सुनाई दिया – काफ़िला फिर रुक गया था। झीलिन सोचने लगा : "क्यों न मैं अकेला ही चल दूं, गारद के बिना ही? घोड़ा मेरा तेज़ है, अगर तातारों से सामना हो भी गया, तो भाग निकलूंगा। जाऊं या न जाऊं?"

ऐसे ही खड़ा-खड़ा वह सोच रहा था। तभी घोड़े पर सवार एक दूसरा अफ़सर कस्तीलिन वहां आया। उसके पास बंदूक थी। वह बोला :

"चलो, झीलिन अकेले ही चलते हैं। मुझ से अब नहीं रहा जाता, भूख लगी है, ऊपर से यह गर्मी। मैं तो पसीने से तर हो गया।"

कस्तीलिन खासा भारी-भरकम था, गर्मी के मारे उसका मुंह लाल हो रहा था और पसीना चू रहा था। झीलिन कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला :

"बंदूक में गोलियां तो हैं?"

"हैं।"

"तो चलो, चलते हैं। पर एक बात है: रास्ते में अलग-अलग नहीं होना, साथ-साथ चलना होगा।"

बस वे दोनों आगे बढ़ चले। बातें करते, इधर-उधर नज़र डालते हुए वे स्तेपी में चले जा रहे थे। चारों ओर दूर-दूर तक दिखाई देता था। आखिर उन्होंने स्तेपी पार कर ली, आगे रास्ता दो पहाड़ों के बीच से जाता था। झीलिन बोला:

"पहाड़ी पर चढ़के देख लेना चाहिए, नहीं तो अचानक कहीं पहाड़ी के पीछे से निकल आएंगे, पता भी नहीं चलेगा।"

पर कस्तीलिन ने कहा:

"देखना क्या है? चले चलो।"

झीलिन ने उसका कहना नहीं माना और घोड़े को बाईं ओर पहाड़ी पर चढ़ा दिया। घोड़ा शिकारी था (झीलिन ने सौ रूबल में बछेड़ा ख़रीदा था और खुद ही उसे निकाला था); हवा से बातें करते हुए वह पहाड़ी पर चढ़ गया। ऊपर पहुंचते ही झीलिन ने क्या देखा कि उसके बिल्कुल सामने चारेक बीघा दूर घुड़सवार तातार खड़े हैं, कोई तीस लोग होंगे। उन्हें देखते ही वह पीछे मुड़ा; तातारों ने भी उसे देख लिया, उसकी तरफ़ घोड़े दौड़ा दिए और बंदूकें निकालने लगे। झीलिन घोड़े को ढलान पर सरपट दौड़ाने लगा। उसने कस्तीलिन से चिल्लाकर कहा:

"बंदूक निकालो!" मन ही मन वह अपने घोड़े से मिन्नत कर रहा था: "ले चल, भैया, कहीं ठोकर न लेना; गिर गया, तो बस काम तमाम समझो। एक बार बंदूक तक पहुंच जाऊं, फिर मैं इनके हाथ नहीं आऊंगा।"

कस्तीलिन इंतज़ार करने के बजाय तातारों को देखते ही जान छोड़कर किले की ओर दौड़ा। वह कभी इस बगल से कभी उस बगल से घोड़े पर कोड़े बरसाता जा रहा था। धूल के बादल में बस घोड़े की दुम हिलती नज़र आ रही थी।

झीलिन ने देखा कि मामला गड़बड़ है। बंदूक चली गई, एक तलवार से वह क्या कर लेगा। उसने घोड़े को वापस गारद की ओर घुमाया – सोचता था निकल जाएगा। पर देखा क्या कि उधर से उसका रास्ता काटने को छह

घुड़सवार दौड़े चले आ रहे हैं। उसका घोड़ा तेज़ था, पर उनके घोड़े और भी ज़्यादा तेज़ थे और ऊपर से वे उसका रास्ता भी काट रहे थे। झीलिन ने घोड़े को रोकना चाहा, दूसरी ओर मोड़ना चाहा, पर घोड़ा इतनी तेज़ी से दौड़ा जा रहा था कि रोका नहीं जा सकता था, वह सीधा तातारों की ओर बढ़ता जा रहा था। झीलिन ने देखा कि सब्ज़े घोड़े पर सवार लाल दाढ़ी वाला तातार उसके पास आ रहा है। वह खीसें निपोड़े हुए चीख रहा था, बंदूक ताने हुए था।

झीलिन मन ही मन सोच रहा था: "जानता हूं मैं तुम कमबख़्तों को : अगर ज़िंदा पकड़ लिया, तो गड्ढे में डाल दोगे, कोड़े मारोगे। नहीं, जीते जी मैं तुम्हारे हाथ नहीं आनेवाला ..."

झीलिन था तो नाटा सा ही, पर बड़ा साहसी। उसने तलवार निकाली और घोड़े को सीधे लाल तातार की ओर बढ़ाया, सोच रहा था: "या तो घोड़े से कुचल दूंगा, या तलवार से सिर उड़ा दूंगा"।

एक घोड़े का फ़ासला रह गया, तभी पीछे से किसी ने गोली चला दी, गोली घोड़े को लगी। घोड़ा धड़ाम से ज़मीन पर गिरा, झीलिन की टांग उसके तले दब गई।

झीलिन उठना चाहता था, पर दो तातार उसके ऊपर चढ़ गये थे, उसकी बांहें पीछे मरोड़ रहे थे। झीलिन ने झटके से उन्हें उतार फेंका, पर तभी और तीन तातार घोड़ों से उतर आए, बंदूकों के कुंदे उसके सिर पर मारने लगे। झीलिन की आंखों आगे अंधेरा छा गया, टांगें लड़खड़ा गयीं। तातारों ने उसे पकड़ लिया। ज़ीनों पर लगे फ़ालतू तंग उतारे, उसकी बांहें पीठ पीछे मरोड़कर तातारी गांठ बांध दी और घसीटते हुए काठी की ओर ले चले। किसी ने उसकी टोपी उतार ली, घुटनों तक ऊंचे बूट खींच लिए, सारी जेबें टटोल-टटोलकर पैसे, घड़ी जो कुछ मिला निकाल लिया, कपड़े फाड़ डाले। झीलिन ने अपने घोड़े पर नज़र डाली: वह बेचारा जिस बल गिरा था, उसी बल पड़ा हुआ था, बस हवा में टांगें फेंक रहा था, लेकिन टाप ज़मीन पर नहीं पड़ रहे थे। सिर में छेद था और छेद में से ख़ून की धार फूट रही थी, चारों ओर हाथ भर मिट्टी ख़ून से रंग गई थी।

एक तातार घोड़े के पास जाकर काठी उतारने लगा – घोड़ा टांगें हवा

में फेंके जा रहा था। तातार ने छुरा निकाला और उसकी गर्दन काट दी। गर्दन से सूं की आवाज़ निकली, घोड़ा छटपटाया और उसके प्राण पखेरू उड़ गए।

तातारों ने काठी उतार ली, साज़ उतार लिया। लाल दाढ़ी वाला तातार घोड़े पर सवार हो गया, दूसरों ने झीलिन को उठाकर उसकी काठी पर बिठा दिया, वह गिरे न, इसलिए उसकी कमर पर पेटी खींचकर तातार से बांध दी। और फिर वे उसे पहाड़ों में ले चले।

अब झीलिन तातार के पीछे बैठा धचके खा रहा था। उसका चेहरा तातार की पीठ से टकरा-टकरा जाता था। उसकी आंखों के सामने बस तातार की चौड़ी पीठ थी, गर्दन की फूली हुई नसें या टोपी के नीचे से मुंडी हुई टांड ही उसे नज़र आ रही थी। झीलिन का सिर फूटा हुआ था, आंखों के ऊपर ख़ून जम गया था। न तो वह घोड़े पर ठीक से होकर बैठ सकता था, न ख़ून पोंछ सकता था। हाथ इतने कसकर बांधे गए थे कि हंसली में दर्द हो रहा था।

बड़ी देर तक वे चलते रहे, एक पहाड़ी से दूसरी पर चढ़ते-उतरते। एक नदी पांझ पर हलकर पार की। सड़क पर पहुंचे और तंग घाटी में होकर जाने लगे।

झीलिन रास्ता याद करना चाहता था कि उसे किधर ले जा रहे हैं, पर आंखें ख़ून में सनी हुई थीं और सिर भी नहीं घुमा सकता था।

झुटपुटा होने लगा। उन्होंने एक और नदी पार की, फिर पथरीली पहाड़ी पर चढ़ने लगे। धुएं की गंध आई, कुत्ते भौंकने लगे। वे लोग गांव में पहुंच गए। तातार घोड़ों से उतर गए, उनके बच्चे जमा हो गए, उन्होंने झीलिन को घेर लिया। ख़ुशी से चीखते-चिल्लाते वे झीलिन को कंकड़ मारने लगे।

तातार ने बच्चों को भगा दिया, झीलिन को घोड़े पर से उतारा और नौकर को आवाज़ दी। एक नगाई* आया – गालों की हड्डियां उभरी हुई, कुर्ता सा पहने। कुर्ता फटा हुआ था, सारी छाती उघड़ी हुई थी। तातार ने उसे

---

* काकेशिया (कोहकाफ़) में बसनेवाली एक जाति। इन लोगों की भाषा तातारों से मिलती-जुलती है। – सं०

कुछ कहा। नौकर बेड़ी लाया : बलूत की लकड़ी के दो कुन्दे, उन पर लोहे के कड़े लगे हुए, एक कड़े में कुंडा और ताला लगा हुआ।

झीलिन के हाथ खोलकर पैरों में बेड़ी चढ़ा दी और कोठरी में ले गया ; उसे कोठरी में धकेलकर बाहर से दरवाज़ा बंद कर दिया। झीलिन गोबर पर गिरा। अंधेरे में टटोलते हुए उसने नरम जगह ढूंढ़ी और लेट गया।

(२)

उस रात झीलिन सो नहीं सका। रातें छोटी थीं। उसने देखा दरार में उजाला हो रहा है। उठकर दरार के पास गया, कुरेदकर दरार बड़ी की और देखने लगा।

दरार में से उसे सड़क दिखाई दे रही थी, जो पहाड़ी के नीचे चली गई थी। दाईं ओर तातारों का घर था, उसके पास दो पेड़ उग रहे थे। दहलीज़ पर काला कुत्ता लेटा हुआ था, बकरी मेमनों के साथ टहल रही थी, वे सब दुम हिला रहे थे। झीलिन ने देखा ढलान पर से जवान तातार औरत चढ़ी आ रही थी, वह रंग-बिरंगी, खुली कमीज़ और सलवार पहने थी, पांवों में घुटनों तक ऊंचे बूट थे, सिर कफ़्तान से ढका हुआ था और सिर पर टीन की झज्झर थी, पानी से भरी हुई। चलते हुए उसकी कमर लचक रही थी। सिर मुंडे लड़के की उंगली पकड़े उसे साथ लिए जा रही थी, लड़के ने बस एक कुर्ता ही पहन रखा था। पानी उठाए तातार औरत घर में चली गई। घर में से तातार निकला – वही कल वाला, लाल दाढ़ी वाला। उसने रेशमी अंगरखा पहन रखा था, कमरबंद पर चांदी के काम वाला खंजर लटक रहा था, बिना जुराबों के ही जुतियां पहन रखी थीं। सिर पर ऊंची टोपी थी, काली भेड़ की खाल की, पीछे को मोड़ी हुई। बाहर निकलकर उसने अंगड़ाई ली, अपनी लाल दाढ़ी सहलाई। थोड़ी देर खड़ा रहा, फिर नौकर से कुछ कहा और कहीं चल दिया।

दो लड़के घोड़ों पर सवार नदी की ओर गए। फिर कुछ और सिर मुंडे लड़के घरों से बाहर निकले, सब निरा कुर्ता पहने, नंगे पैर थे। वे एक झुंड में खड़े हो गए, फिर कोठरी के पास आए, दरार में तिनके डालने लगे। झीलिन

ने ज़ोर से आवाज़ की, बच्चे चीखे और भाग उठे, बस उनके नंगे घुटने ही चमकते रहे।

झीलिन को प्यास लगी थी, गला सूख रहा था। वह मन ही मन कह रहा था: कोई ख़बर लेने ही आ जाता। तभी उसे कोठरी खुलने की आवाज़ सुनाई दी। लाल तातार आया और उसके साथ एक काला तातार भी, उससे थोड़े छोटे क़द का आंखें काली-काली, लाल गाल, छोटी सी, छटी हुई दाढ़ी। चेहरे से खुशमिज़ाज लगता था, हंसता जा रहा था। इसने और भी अच्छे कपड़े पहने रखे थे: नीला अंगरखा, जिस पर डोरियां लगी हुई थीं, कमर पर चांदी के काम वाला खंजर लटक रहा था। पैरों में पतले चमड़े की लाल जूतियां पहने था – ज़री के काम वाली और उनके ऊपर मोटे जूते। सिर पर सफ़ेद भेड़ की ऊंची टोपी।

लाल तातार अंदर आया, कुछ बोला, मानो नाराज़ हो रहा हो और भरेठ का सहारा लेकर खड़ा हो गया। खंजर हिलाता हुआ और भौंहें सिकोड़कर खूंख़्वार भेड़िये की तरह झीलिन को देखने लगा। काला तातार बड़ा तेज़ था, लपकता हुआ चलता था। झीलिन के पास आ गया, उकड़ूं होकर बैठ गया, खीसें निपोड़ लीं, झीलिन का कंधा थपथपाने लगा और जल्दी-जल्दी अपनी भाषा में कुछ बोलने लगा, साथ में आंख मारता जाए, जीभ से च-च करे और बीच-बीच में बोलता जाए: "अच्चा उरूस*! अच्चा उरूस!"

झीलिन कुछ नहीं समझा, बोला: "पानी दो, पानी।"

काला हंसता जा रहा था। "अच्चा उरूस," अपनी बोली में बोलता जा रहा था।

झीलिन ने होंठों और हाथों से दिखाया कि उसे प्यास लगी है।

काला तातार समझ गया, हंस पड़ा, दरवाज़े की ओर देखा और किसी को पुकारा: "दीना!"

एक लड़की भागी आई, दुबली-पतली, कोई तेरह साल की, शक्ल-सूरत

---

* तातार रूसियों को 'उरूस' कहते थे और उनके लिए हर रूसी का नाम 'इवान' था। – सं०

बिल्कुल काले तातार जैसी। उसकी बेटी ही होगी। उसकी आंखें भी काली, चमकदार थीं और चेहरा सुंदर। लंबी, नीली कमीज़ पहने थी, चौड़ी बाहों वाली और कमरबंद के बिना। कमीज़ के दामन, छाती और बाजुओं पर लाल गोट लगी हुई थी। सलवार पहने थी। पैरों में पतली जूतियां और उनके ऊपर ऊंची एड़ी की दूसरी मोटी जूतियां। गले में पचास कोपेक के रूसी सिक्कों की हंबेल। सिर नंगा था, काली चोटी और चोटी में रिबन गुंथा हुआ, रिबन पर पतरियां और चांदी का रूबल लगा हुआ था।

बाप ने उसे कुछ कहा। वह दौड़ी गई और फिर लौट आई, जस्ते की सुराही लाई। झीलिन को पानी दिया और खुद उसके सामने उकड़ूं बैठ गई ऐसे गठरी बन गई कि कंधे घुटनों से नीचे हो गए। आंखें फाड़-फाड़कर देखने लगी कि कैसे झीलिन पानी पी रहा है, मानो वह कोई जानवर हो।

झीलिन ने उसे सुराही लौटाई। वह जंगली बकरी की तरह उछलकर पीछे हटी। उसका बाप भी हंस पड़ा। फिर उसे कहीं भेज दिया। उसने सुराही उठाई और दौड़ी गई। गोल पटरी पर फीकी रोटी लाई, फिर बैठ गई, गठरी बन गई, टकटकी लगाकर झीलिन को देखती जाए।

तातार चले गए, दरवाज़ा बंद कर गए।

थोड़ी देर बाद नगाई आया, बोला :

"ऐ, मालिक, ओ-ओ!"

उसे भी रूसी नहीं आती थी। पर झीलिन समझ गया कि कहीं जाने को कह रहा है।

झीलिन बेड़ी पहने चल दिया, लंगड़ाता जाए, पैर नहीं रखा जा रहा था – एक ओर को मुड़-मुड़ जाता था। झीलिन नगाई के पीछे-पीछे बाहर निकला। देखा : दसेक घरों का गांव है और मीनार वाली मस्जिद। एक घर के पास तीन घोड़े खड़े थे – ज़ीन कसे हुए। लड़कों ने लगामें पकड़ रखी थीं। उस घर से काला तातार निकला, हाथ हिलाने लगा कि झीलिन उधर आए। हंसता जा रहा था और अपनी बोली में कुछ बोल रहा था, फिर दरवाज़े में घुस गया। झीलिन घर के अंदर गया। बैठक अच्छी थी, दीवारों पर चिकनी मिट्टी से पुताई की हुई थी। सामने की दीवार के आले में रंग-बिरंगे तकियों का ढेर

लगा हुआ था, अगल-बगल क़ीमती कालीन टंगे हुए थे; कालीनों पर बंदूकें, पिस्तौलें, सब पर चांदी का काम। एक दीवार में फ़र्श के पास ही अंगीठी बनी हुई थी। फ़र्श भी मिट्टी का था, बिल्कुल साफ़, सामने के सारे कोने में नमदा बिछा हुआ था; नमदे पर कालीन और उन पर परों के तकिये। कालीनों पर पतली जूतियां पहने तातार बैठे थे: काला, लाल और तीन मेहमान। सब की पीठ पीछे मसनद तकिये थे। उनके सामने गोल पटरे पर बाजरे की टिकियां रखी थीं और एक प्याले में पिघला हुआ मक्खन। सुराही में तातारों की बियर रखी थी – बूज़ा। वे हाथों से खा रहे थे, उंगलियां मक्खन में सनी हुई थीं।

काला तातार खड़ा हो गया, झीलिन को एक ओर बिठाने को कहा, कालीन पर नहीं, नंगे फ़र्श पर। फिर से वह कालीन पर जा बैठा, मेहमानों को टिकियां और बूज़ा देने लगा। नौकर ने झीलिन को उसकी जगह पर बिठा दिया, खुद ऊपर के जूते उतारे, उन्हें दरवाज़े के पास रखा, जहां दूसरों के जूते भी रखे हुए थे और मालिकों के पास नमदे पर बैठ गया; उन्हें खाते देखता जाए और लार टपकाता जाए।

तातारों ने टिकियां खा लीं। एक औरत आई, लड़की जैसी ही सलवार-कमीज़ पहने; सिर पर कसाबा बांधे थी। वह मक्खन और टिकियां ले गई, लकड़ी की चिलमची और पतली टोंटी वाली सुराही लाई। तातार हाथ धोने लगे, फिर घुटनों के बल बैठ गए, हाथ जोड़े, चारों ओर फूंक मारी और दुआ पढ़ी। आपस में बातें करने लगे। फिर मेहमानों में से एक तातार झीलिन की ओर मुड़ा और रूसी में बोलने लगा:

"तुझे काज़ी मुहम्मद ने पकड़ा है," लाल तातार की ओर इशारा किया, "और अब्दुल मुराद को दे दिया," काले तातार की ओर दिखाया, "अब अब्दुल मुराद तेरा मालिक है।"

झीलिन चुप बैठा रहा। अब्दुल मुराद बोलने लगा, बार-बार झीलिन की ओर दिखाता जाए और हंसता जाए, बोला: "उरूस सिपाही, अच्छा उरूस"। दुभाषिया बोला: "वह कहता है तू घर चिट्ठी लिख, ताकि तेरे बदले पैसे भेजें। जब पैसे आ जाएंगे, तो वह तुझे छोड़ देगा।"

झीलिन कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला:

"कितने पैसे चाहता है?"

तातार बातें करने लगे; दुभाषिया बोला:

"तीन हज़ार सिक्के।"

"नहीं, इतने मैं नहीं दे सकता," झीलिन ने जवाब दिया।

अब्दुल उछलकर खड़ा हो गया, हाथ हिलाने लगा और झीलिन से कुछ कहने लगा – सोच रहा था कि वह समझ जाएगा। दुभाषिये ने बताया: "कितना देगा तू?" झीलिन सोचता रहा, फिर बोला: "पांच सौ रूबल"। सब तातार एकसाथ जल्दी-जल्दी बोलने लगे। अब्दुल लाल तातार पर चिल्लाने लगा, ऐसे ज़ोर-ज़ोर से गिटपिट करने लगा कि मुंह से थूक निकलने लगी। लाल तातार बस आंखें सिकोड़ता जाए और जीभ से च-च करता जाए।

वे चुप हो गए तो दुभाषिये ने कहा:

"मालिक के लिए ५०० रूबल थोड़े हैं। उसने खुद तेरे बदले २०० दिए हैं। काज़ी मुहम्मद उसका कर्ज़दार था। उसने तुझे कर्ज़े के बदले लिया है। तीन हज़ार रूबल से कम नहीं हो सकता। नहीं लिखेगा, तो तुझे गड्ढे में बिठा देंगे, कोड़ों से सज़ा मिलेगी।"

झीलिन ने मन ही मन सोचा: "इनके आगे झुकने से तो और बुरा ही होगा।"

वह उठ खड़ा हुआ और कहने लगा:

"तू उससे कह दे कि अगर वह मुझे डराना चाहता है, तो एक कोपेक भी नहीं दूंगा और घर लिखूंगा भी नहीं, मैं तुम लोगों से न कभी डरा हूं, न डरूंगा।"

दुभाषिये ने उसकी बात उन्हें बता दी, फिर सब एकसाथ बोलने लगे। बड़ी देर तक गिटपिट करते रहे, फिर काला तातार उठा, झीलिन के पास आया, कहने लगा:

"उरूस जिगीत, जिगीत उरूस!"

जिगीत का उनकी बोली में मतलब है: बड़ा अच्छा है। तातार खुद हंसता जा रहा था, उसने दुभाषिये से कुछ कहा और वह बोला:

"चल, एक हज़ार दे दे।"

झीलिन अपनी बात पर अड़ गया: "५०० रूबल से ज़्यादा नहीं दूंगा। अगर मार डालोगे, तो कुछ भी नहीं पाओगे।"

तातारों ने आपस में बात की, नौकर को कहीं भेजा और ख़ुद कभी झीलिन और कभी दरवाज़े की ओर ताकने लगे। नौकर आया, उसके पीछे कोई मोटा सा आदमी चला आ रहा था – नंगे पैर, फटे हाल; उसके पांव में भी बेड़ी थी।

झीलिन देखकर दंग रह गया। कस्तीलिन को पहचान गया। उसे भी पकड़ लिया था। दोनों को उन्होंने पास-पास बिठा दिया। वे दोनों एक दूसरे को आपबीती बताने लगे, तातार चुपचाप उन्हें देखते रहे। झीलिन ने उसके साथ जो कुछ हुआ था बताया। कस्तीलिन ने बताया कि उसका घोड़ा अड़ गया, बंदूक भी चली नहीं, और बस इसी अब्दुल ने उसे जा पकड़ा था।

अब्दुल उचककर खड़ा हुआ, कस्तीलिन की ओर इशारा कर-करके कुछ कहने लगा। दुभाषिये ने बताया कि अब वे एक ही मालिक के हैं, जो पहले पैसे देगा, वही पहले छूट जाएगा। झीलिन से कहने लगा:

"देख, तू गुस्सा करता है, और तेरा साथी ठंडे मिज़ाज का है; उसने घर लिख दिया है, पांच हज़ार सिक्के भेजेंगे। अब उसे खाना भी अच्छा मिलेगा और तंग भी नहीं करेंगे।"

झीलिन ने जवाब दिया:

"साथी जो चाहे करे: हो सकता है वह अमीर हो, पर मैं अमीर नहीं। जैसे मैंने कह दिया, वही होगा। जी में आए तो मार डालो, तुम्हारे हाथ कुछ लगने का नहीं। पर मैं ५०० से ज़्यादा नहीं लिखूंगा।"

सब चुप रहे। फिर अब्दुल झटके से उठ खड़ा हुआ, संदूकची ली, उसमें से कलम निकाली, कागज़ का टुकड़ा और स्याही, झीलिन को सब दिया और उसके कंधे पर हाथ मारा, हुक्म दिया: "लिख"। राज़ी हो गया पांच सौ पर।

"ठहर जा," झीलिन ने दुभाषिये से कहा, "तू इससे कह दे कि हमें खाना अच्छा दे और ढंग के जूते-कपड़े भी, कि हमें इकट्ठा रखे – ऐसे हम अच्छे रहेंगे, और हमारी बेड़ियां भी उतार दे", कहते हुए वह मालिक की ओर देखकर हंसता जा रहा था। मालिक भी हंस रहा था। उसने सारी बात सुनी और बोला:

"कपड़े बहुत बढ़िया दूंगा : चोगा भी और ऊंचे बूट भी, ऐसे कि पहनकर शादी कर सको। अगर इकट्ठा रहना चाहते हैं तो रहें कोठरी में। पर बेड़ी नहीं उतारी जा सकती – भाग जाएंगे। रात को सिर्फ़ उतार दिया करेंगे।" उठा और झीलिन का कंधा थपथपाया। "तेरा अच्छा, मेरा अच्छा!"

झीलिन ने चिट्ठी लिख दी, पर पता ठीक नहीं लिखा। मन ही मन सोचा : "भाग जाऊंगा।"

झीलिन और कस्तीलिन को कोठरी में ले जाया गया। उनके लिए करबी ले आए, दो पुराने चोगे और घुटनों तक ऊंचे बूट, सिपाहियों के। मारे गए सिपाहियों के उतारे हुए होंगे। रात को उनकी बेड़ियां उतारकर उन्हें कोठरी में बंद कर दिया।

(३)

झीलिन और उसका साथी महीने भर ऐसे ही रहे। मालिक जब देखता, हंसता : "तू इवान अच्छा, हम अब्दुल अच्छा!" खाना जैसा-तैसा ही देता था – सिर्फ़ बाजरे की फीकी रोटियां और वे भी कभी कच्ची, कभी पकी हुई।

कस्तीलिन ने एक बार और घर चिट्ठी लिखी, बस इसी इंतज़ार में रहता था कि कब पैसे आएं। सारा-सारा दिन कोठरी में बैठा दिन गिनता रहता था कि कब चिट्ठी आएगी या सोता रहता था। झीलिन जानता था कि उसकी चिट्ठी घर तक नहीं पहुंचेगी और दूसरी चिट्ठी उसने लिखी नहीं।

वह सोचता था : "मां के पास इतने पैसे कहां से आएंगे? वैसे ही मैं जो भेजता था, उसी से उसकी गुज़र होती थी। ५०० रूबल जमा करने के लिए तो उसे कंगाल होना पड़ेगा ; खुद ही किसी तरह निकल जाऊंगा।"

खुद वह हर वक़्त इसी ताक में रहता था कि कैसे भागा जा सकता है।

गांव में सीटी बजाता घूमता रहता, या बैठा-बैठा कुछ बनाता रहता : कभी चिकनी मिट्टी से गुड़ियां बना देता, कभी बेल की टहनियों से कोई चीज़। झीलिन ऐसे काम करने में होशियार था।

एक दिन उसने गुड़िया बनाई, छोटी सी नाक, बाहें और टांगें भी, तातारों जैसी ही कमीज़ और छत पर उसे सुखाने को रख दिया। तातार लड़कियां पानी लेने चलीं। मालिक की बेटी दीना ने गुड़िया देख ली, दूसरी लड़कियों को बुलाया। सबने झञ्झरें उतार कर रख दीं, गुड़िया देखती जाएं और हंसती जाएं। झीलिन ने गुड़िया उतारकर उनकी ओर बढ़ाई। वे हंसती जाएं, पर लेने की हिम्मत न करें। गुड़िया वहीं रखकर वह कोठरी में चला गया, चुपके-चुपके देखने लगा, अब क्या होगा?

दीना दौड़ी-दौड़ी आई, इधर-उधर देखा, गुड़िया उठाई और भाग गई।

अगले दिन सुबह उसने देखा दीना गुड़िया उठाए दहलीज़ पर आई। गुड़िया को उसने लाल चिथड़ों से सजा लिया था और अब बच्चे की तरह गोद में झुला रही थी, अपनी बोली में लोरी सुना रही थी। एक बुढ़िया बाहर निकली, उसे डांटने लगी, गुड़िया छीनकर तोड़ डाली और दीना को कुछ काम करने भेज दिया।

झीलिन ने एक और गुड़िया बनाई, पहली से भी अच्छी और दीना को दे दी। एक दिन दीना सुराही लेकर आई, उसके पास रख दी, बैठकर उसकी ओर देखने लगी, सुराही की ओर इशारा करके हंसती जाए।

"इतनी खुश क्यों हो रही है?" झीलिन ने सोचा। सुराही उठाई और पीने लगा। उसने सोचा था पानी होगा, पर उसमें दूध था। झीलिन ने दूध पी लिया और बोला: "आहा! बहुत अच्छा!" कितनी खुश हुई दीना!

"अच्चा इवान, अच्चा!" उछलकर तालियां बजाने लगी। सुराही छीनी और भाग गई।

तब से वह रोज़ाना उसके लिए चुपके-चुपके दूध लाने लगी। तातार बकरी के दूध का पनीर बनाकर उसे मोटी रोटियों की शक्ल में छत पर सुखाते हैं। कभी-कभी दीना ऐसी रोटी भी चुपके से ले आती थी। एक बार मालिक के घर भेड़ कटी, दीना बाज़ू में छिपाकर मांस का टुकड़ा ले आई। बस फेंक देती और भाग जाती।

एक दिन खूब बादल गरजे, घंटे भर तक मूसलाधार बारिश होती रही। सारी नदियां उफनने लगीं। जहां पांझ थी, वहां तीन-तीन फुट पानी हो गया,

पत्थर बहते जाएं। हर जगह पानी की धारें बह रही थीं, पहाड़ों में ख़ूब शोर हो रहा था। जब बारिश रुकी, तो गांव में जगह-जगह पानी बह रहा था। झीलिन ने मालिक से चाकू मांग लिया, लकड़ी छील-काटकर धुरी, गोल पटरियां और चक्के बनाए, चक्कों पर पर लगा दिए और पहिए के दोनों ओर गुड़ियां बना दीं।

लड़कियां चीथड़े ले आईं ; उसने गुड़ियों को कपड़े पहना दिए – एक आदमी बन गया, एक औरत ; उन्हें ठीक तरह जोड़ा और पहिया पानी की धार पर रख दिया। पहिया घूमे और गुड़ियां उछलें।

सारा गांव जमा हो गया : लड़के, लड़कियां, औरतें और तातार भी, जीभ से चटखारे भरते जाएं :

"वाह, उरूस, वाह, इवान!"

अब्दुल के पास रूसी घड़ी थी, ख़राब हो गई थी। उसने झीलिन को बुलाया, घड़ी दिखाई और च-च करने लगा। झीलिन बोला :

"लाओ, ठीक कर दूं।"

घड़ी लेकर उसे चाकू से खोल डाला, एक-एक पुर्ज़ा अलग किया ; फिर जोड़ दिया और दे दी। घड़ी चलने लगी। मालिक ख़ुश हो गया, अपना पुराना, फटा हुआ अंगरखा लाकर उसे दे दिया। क्या करता, ले लिया और कुछ नहीं तो रात को ओढ़ने के काम आएगा।

तब से झीलिन की मशहूरी हो गई कि वह अच्छा कारीगर है। दूर के गांवों से भी लोग आने लगे, कोई बंदूक या पिस्तौल का घोड़ा ठीक कराने, कोई घड़ी ठीक कराने। मालिक ने उसे औज़ार ला दिए : चिमटी, बरमा, रेती।

एक बार एक तातार बीमार पड़ गया, झीलिन को बुलाया गया : "चल, इलाज कर!" झीलिन को कुछ पता नहीं था कैसे इलाज-विलाज किया जाए। गया, तातार को देखा और मन ही मन सोचा : "कौन जाने अपने आप ही ठीक हो जाए।" कोठरी में चला गया, थोड़ा पानी लिया और उसमें रेत मिला दी। तातारों के सामने पानी पर मंत्र पढ़ दिया और बीमार को पिला दिया। उसकी ख़ुशक़िस्मती से तातार ठीक हो गया।

झीलिन उनकी बोली भी थोड़ी-थोड़ी समझने लगा। जो तातार उसके कुछ आदी हो गए थे, उन्हें जब ज़रूरत पड़ती, पुकारते: "इवान, इवान!" कुछ ऐसे भी थे जो तिरछी नज़रों से ऐसे देखते थे जैसे वह कोई जानवर हो।

लाल तातार को झीलिन फूटी आंखों न सुहाता था। उसे देखते ही वह मुंह मोड़ लेता या गाली देता। एक और बूढ़ा था उनके यहां। वह गांव में नहीं रहता था पहाड़ी के नीचे से कहीं से आता था। वह मस्जिद में नमाज़ पढ़ने जब आता, तभी झीलिन उसे देखता। कद उसका छोटा था, टोपी पर सफ़ेद दुपट्टा बंधा हुआ था, दाढ़ी और मूंछें छंटी हुई थीं, बिल्कुल सफ़ेद थीं। चेहरा सारा झुर्रियों से भरा था और ईंट सा लाल। नाक उसकी बाज़ जैसी थी और आंखें सुरमई, कठोरता भरी, मुंह में बस दो दांत रह गए थे। वह अपनी पगड़ी पहने, बैसाखी का सहारा लिए चलता आता और खूंख़्वार भेड़िये की तरह इधर-उधर घूरता जाता। झीलिन को देखते ही, गुर्राने लगता और मुंह मोड़ लेता।

एक दिन झीलिन पहाड़ी उतरकर देखने गया कि बूढ़ा कहां रहता है। पगडंडी पर नीचे उतरा, देखा, पत्थरों की बाड़ के पीछे बाग़ है, बाग़ में चैरी और दूसरे फलों के पेड़ लगे हुए हैं। और बीच में सपाट छत वाला मकान। और पास गया, देखा, पयाल के बने मधुमक्खियों के छत्ते रखे हुए हैं और मधुमक्खियां उड़ रही हैं, भिनभिना रही हैं। बूढ़ा घुटनों के बल खड़ा छत्ते के पास कुछ कर रहा है। झीलिन ने उचककर देखना चाहा, बेड़ी की आवाज़ हुई। बूढ़े ने पलटकर देखा और चीख उठा; कमरबंद से पिस्तौल निकाली और झीलिन पर गोली चला दी। झीलिन मुश्किल से पत्थर के पीछे झुक पाया।

बूढ़े ने आकर मालिक से शिकायत की। मालिक ने झीलिन को बुलाया, हंसते-हंसते पूछा:

"तू क्यों गया था इसके घर?"

"मैंने इसका कुछ बिगाड़ा नहीं। मैं तो बस देखना चाहता था कि यह कैसे रहता है।"

मालिक ने बूढ़े को बताया। बूढ़ा गुस्से से लाल-पीला होता जाए, गिटपिट करता जाए, नुकीले दांत बाहर निकल आए, झीलिन की ओर हाथ झटकाता जाए।

झीलिन सारी बात तो नहीं समझा, पर इतना समझ गया कि बूढ़ा मालिक को कह रहा रूसियों को मार डालो, गांव में मत रखो। फिर बूढ़ा चला गया।

झीलिन मालिक से पूछने लगा: "कौन है यह बूढ़ा?" मालिक ने बताया:

"यह बहुत बड़ा आदमी है! बड़ा शूरवीर था यह, इसने बहुत सारे रूसियों को मारा है, खूब अमीर था। तीन बीवियां थीं इसकी और आठ बेटे। सब एक ही गांव में रहते थे। रूसी आए, उन्होंने गांव तबाह कर दिया, सात बेटों को मार डाला। एक बेटा बच गया, वह रूसियों से जा मिला। बूढ़े ने भी जाकर अपने आपको रूसियों के सुपुर्द कर दिया। तीन महीने उनके पास रहा, वहां अपने बेटे को ढूंढ़ लिया, उसे मार डाला और भाग गया। तब से इसने लड़ना छोड़ दिया। मक्का गया, हज करने। इसीलिए वह पगड़ी पहनता है। जो मक्का हो आता है, उसे हाजी कहते हैं और वह पगड़ी पहनता है। उसे तुम रूसी अच्छे नहीं लगते। वह कहता है कि मैं तुझे मार डालूं, पर मैं मार नहीं सकता – मैंने तेरे बदले पैसे दिए हैं। और तू तो, इवान, मुझे अच्छा लगने लगा है। तुझे मारना तो क्या, मैं तुझे छोड़ूं भी नहीं, पर मैंने वचन दिया है।" वह हंसने लगा और रूसी में बोला: "तू, इवान अच्चा, हम अब्दुल अच्चा।"

(४)

इसी तरह एक महीना और बीत गया। झीलिन दिन में गांव में घूमता रहता या कुछ बनाता रहता। रात पड़ती, गांव में सन्नाटा हो जाता, तो वह कोठरी में ज़मीन खोदने लगता, पत्थरों के कारण खोदना मुश्किल था, पर वह रेती से पत्थर रगड़ता था और अब दीवार तले इतना बड़ा छेद कर लिया था कि उसमें से निकला जा सकता था। वह सोचता रहता: "अब बस किसी तरह इस जगह का ठीक से पता चल जाए कि किधर जाना चाहिए, पर तातार कुछ बताते ही नहीं।"

आखिर, उसने ऐसा मौक़ा देखा, जब मालिक कहीं गया हुआ था; दोपहर

में गांव के बाहर पहाड़ी पर जाने लगा – वहां से सारी जगह देखना चाहता था। मालिक जब घर से जा रहा था, तो छोटे बेटे से कह गया था कि झीलिन पर नज़र रखे। लड़का झीलिन के पीछे दौड़ा, चिल्लाया :

"नहीं जा उधर! अब्बा ने मना किया है। नहीं तो अभी मैं लोगों को बुला लूंगा।"

झीलिन उसे मनाने लगा, बोला :

"मैं दूर नहीं जाऊंगा, बस उस पहाड़ी पर; मुझे एक बूटी ढूंढ़नी है – तुम्हारे लोगों के इलाज के लिए। चल मेरे साथ, बेड़ी पहने हुए मै भाग थोड़े ही जाऊंगा। कल मैं तेरे लिए तीर-कमान बना दूंगा।"

छोटा मान गया, और वे चल दिए। पहाड़ी देखने में तो पास ही थी, पर बेड़ी पहनकर चलना बड़ा मुश्किल था। चलता गया, चलता गया और जैसे-तैसे चढ़ ही गया। झीलिन बैठ गया और जगह देखने लगा। दोपहर में जहां सूरज होता है, उस ओर कोठरी के पीछे तंग घाटी थी, उसमें घोड़े चर रहे थे और नीचे एक दूसरा गांव दिख रहा था। उस गांव से एक ओर पहाड़ी चली गई थी, इस से भी बड़ी और उसके पीछे एक और पहाड़ी थी। पहाड़ियों के बीच नीला-नीला जंगल दिख रहा था, आगे पहाड़ ऊपर ही ऊपर चले गए थे। सबसे ऊपर थे हिमाच्छादित पर्वत। टोपी सा एक हिम पर्वत सबसे ऊंचा था। सूर्योदय और सूर्यास्त की ओर भी ऐसे ही पहाड़ थे; कहीं-कहीं दर्रों में गांवों का धुआं उठ रहा था। "अच्छा, तो यह सब तो इनका ही इलाक़ा है," झीलिन ने सोचा और वह रूसी इलाक़े की ओर देखने लगा; नीचे नदी थी और गांव, जहां से वह आया था, चारों ओर बाग़ लगे हुए थे। नदी किनारे गुड़ियों सी लग रही औरतें कपड़े धो रही थीं। गांव के पीछे, थोड़ी नीचे को एक पहाड़ी और उसके पीछे और दो पहाड़ियां, उन पर जंगल था; दो पहाड़ियों के बीच धुंधला सा सपाट मैदान नज़र आ रहा था और उस मैदान में बहुत दूर मानो धुआं फैल रहा था। झीलिन यह याद करने लगा कि जब वह क़िले में रहता था, तो सूरज किधर से निकलता था और किधर डूबता था। उसने देखा – ठीक, उसी घाटी में क़िला होना चाहिए, इन दोनों पहाड़ियों के बीच ही भागना चाहिए।

सूरज डूबने लगा। सफ़ेद पहाड़ लाल हो गए ; नीचे की पहाड़ियों में अंधेरा छा गया, तंग घाटियों में से कोहरा उठने लगा और वह बड़ी घाटी, जिसमें क़िला होना चाहिए, सूर्यास्त की किरणों से आग की तरह चमक उठी। झीलिन ग़ौर से देखने लगा – घाटी में डोलायमान सा कुछ दिख रहा था, मानो चिमनी से उठता धुआं हो। उसका मन कहता था कि बस यही रूसी क़िला हो।

देर हो गई थी। मुल्ला की अज़ान सुनाई दी। मवेशी लौट रहे थे, गायें रंभा रही थीं। लड़का कई बार घर चलने को कह चुका था, पर झीलिन का जाने को मन ही नहीं हो रहा था।

वे घर लौट आए। झीलिन सोच रहा था : "अब जगह का पता चल गया, भागना चाहिए।" वह उसी रात भागना चाहता था। रातें अंधेरी थीं, कृष्ण पक्ष था। पर बदक़िस्मती से शाम तक तातार लौट आए। कई बार ऐसा होता था कि वे लौटते तो अपने साथ मवेशी खदेड़कर लाते, हंसते-गाते आते। पर इस बार कुछ नहीं लाए, बस एक काठी पर मारे गए तातार को लाए। वह लाल दाढ़ी वाले का भाई था। सब जले-भूने लौटे थे। दफ़नाने के लिए जमा हुए। झीलिन भी बाहर निकलकर देखने लगा। तातारों ने मुर्दे को कफ़न में लपेट दिया। ताबूत के बिना ही, गांव के बाहर चिनार के पेड़ों तले ले जाकर घास पर लिटा दिया। मौलवी आया, बूढ़े जमा हुए, टोपियों पर दुपट्टे बांधे हुए, जूते उतारकर मुर्दे के सामने घुटनों के बल बैठ गए।

आगे मौलवी, पीछे तीन बूढ़े, पगड़ी बांधे – पास-पास ही, और उनके पीछे बाक़ी तातार। बैठकर सिर नीचे झुका लिए और काफ़ी देर तक चुपचाप बैठे रहे। मौलवी ने सिर उठाया और बोला :

"अल्लाह।" यही एक शब्द कहा और फिर सिर झुका लिया, देर तक चुप बैठे रहे, ज़रा भी हिले-डुले नहीं। फिर मौलवी ने सिर उठाया :

"अल्लाह !" सब बोले : "अल्लाह !" और फिर चुप हो गए।

मुर्दा घास पर रखा हुआ था, और वे भी मुर्दों की तरह बैठे थे, कोई भी ज़रा सा हिलता-डुलता तक न था। बस चिनार की पत्तियों की खड़खड़ाहट ही सुनाई दे रही थी। फिर मौलवी ने दुआ पढ़ी, सब उठे, मुर्दे को उठाया

और ले चले। एक गड्ढे के पास लाए। गड्ढा मामूली नहीं था, ज़मीन के नीचे तहख़ाने की तरह बगली बनी हुई थी। तातारों ने मुर्दे को बगलों और जांघों से पकड़कर उठाया, मोड़ दिया, हौले से नीचे किया, बैठे हुए को ज़मीन के नीचे घुसा दिया और उसके हाथ पेट पर टिका दिए।

नगाई हरे सरकंडे लाया, गड्ढे में उन्होंने सरकंडे रखे और ऊपर से जल्दी-जल्दी मिट्टी डाल दी और बराबर कर दी। मुर्दे के सिर की ओर एक पत्थर खड़ा करके लगा दिया। ज़मीन को दबाया और फिर से क़ब्र के सामने बैठ गए। काफ़ी देर तक चुप बैठे रहे।

"अल्लाह! अल्लाह!" गहरी सांस ली और उठ गए। लाल दाढ़ी वाले ने बूढ़ों को पैसे दिए, फिर उठा, कोड़ा लिया, तीन बार अपने माथे पर मारा और घर चल दिया।

अगले दिन सुबह झीलिन ने देखा कि लाल दाढ़ी वाला घोड़ी को गांव के बाहर ले जा रहा था और तीन तातार उसके पीछे-पीछे जा रहे थे। गांव के बाहर पहुंचकर लाल तातार ने अंगरखा उतारा, कमीज़ की बांहें ऊपर चढ़ाईं – मोटे-तगड़े बाज़ू थे उसके, खंजर निकाला, पत्थर पर धार तेज़ की। तातारों ने घोड़ी का सिर ऊपर उठाया, लाल दाढ़ी वाले ने आकर घोड़ी की गर्दन काट दी, घोड़ी को गिरा दिया और उसे चीरने लगा – अपनी विशाल मुट्ठियों से खाल उतारता जाए। औरतें-लड़कियां आईं, घोड़ी की अंतड़ियां धोने लगीं। फिर घोड़ी के टुकड़े करके घर में ले गए। और सारा गांव शोक मनाने लाल तातार के यहां जमा हुआ।

तीन दिन तक वे घोड़ी का गोश्त खाते रहे और बूज़ा पीते रहे। सारे तातार घर पर ही रहे।

चौथे दिन झीलिन ने दोपहर को देखा कि कहीं जाने की तैयारियां हो रही हैं। घोड़े लाए गए, उन पर साज़ कसा गया और कोई दस लोग चल दिए। लाल दाढ़ी वाला भी चला गया। पर अब्दुल घर पर ही रहा। चांद अभी चढ़ती कला में आया ही था रातें अंधेरी ही थीं।

"बस, आज भाग लेना चाहिए," झीलिन ने सोचा और कस्तीलिन से कहा। पर वह डरने लगा।

"भागेंगे कैसे, हमें तो रास्ते का भी नहीं पता।"

"मैं जानता हूं रास्ता।"

"रात भर में तो पहुंच भी नहीं पाएंगे।"

"नहीं पहुंचेंगे, तो जंगल में रात काट लेंगे। मैंने कुछ रोटियां जमा कर रखी हैं। आखिर कितने दिन यहां बैठे रहेंगे? पैसे आ गए तो ठीक है, पर कौन जाने तुम्हारे घर वाले इतनी बड़ी रकम न भी जमा कर पाएं। तातार आजकल गुस्से में हैं कि रूसियों ने उनके आदमी को मार डाला है। सो हमें मारना चाहते हैं।"

कस्तीलिन सोचता रहा, सोचता रहा, फिर बोला:

"अच्छा, चलो!"

(५)

झीलिन छेद में घुस गया, उसे थोड़ा और खोदकर खुला किया, ताकि कस्तीलिन भी निकल सके; अब वे बैठे इंतज़ार कर रहे थे कि कब गांव में सब शांत हो जाए।

जैसे ही गांव में सोउता पड़ा, झीलिन दीवार के नीचे घुसा और बाहर निकल आया। कस्तीलिन भी घुसा, पर उसका पांव पत्थर से अटक गया, शोर हुआ। मालिक ने रखवाली के लिए एक कुत्ता पाला हुआ था, बड़ा ही कटखना; उसका नाम था उल्याशिन। झीलिन ने उसे पहले से ही परचाया हुआ था। उल्याशिन ने शोर सुना, भौंकने लगा और लपका, उसके पीछे दूसरे कुत्ते भी। झीलिन ने हौले से सीटी बजाई और रोटी का टुकड़ा फेंका। उल्याशिन उसे पहचान गया, दुम हिलाने लगा, भौंकना बंद कर दिया।

मालिक ने आवाज़ सुनी और अंदर से कुत्ते को शुशकारा "लोह! लोह! उल्याशिन!"

झीलिन कुत्ते के कानों के पीछे खुजला रहा था। कुत्ता चुप था, उसके पैरों से थूथनी रगड़ रहा था, दुम हिला रहा था।

कोने के पीछे दुबककर वे कुछ देर बैठे रहे। चारों ओर सन्नाटा छा गया,

बस एक कोठरी में भेड़ मिमिया रही थी और नीचे पत्थरों पर बहते पानी का शोर हो रहा था। अंधेरा था, तारे छिटक गए थे, पहाड़ी के ऊपर हंसिये जैसा चांद उठ रहा था। तंग घाटियों में दूध सा सफ़ेद कोहरा फैला हुआ था।

भीलिन उठा, कस्तीलिन से बोला : "चलो, चलें!"

चल दिए ; दो कदम ही हटे थे कि सुना मुल्ला अज़ान दे रहा है : "अल्लाह, हो अकबर!" तो अब लोग मस्जिद जाएंगे। वे फिर दीवार के पास दुबककर बैठ गए। बड़ी देर तक बैठे रहे, जब तक कि सब लोग नहीं गुज़र गए। फिर से ख़ामोशी हो गई।

"चलो, चलें भगवान का नाम लेकर!" उन्होंने छाती पर सलीब का निशान बनाया और चल दिए। आंगन पार करके ढलान पर नदी तक उतर गए। नदी पार की और तंग घाटी में चलने लगे। कोहरा घना था और नीचे-नीचे था। ऊपर तारे बिल्कुल साफ़-साफ़ नज़र आ रहे थे। भीलिन तारे देख-देखकर अनुमान लगा रहा था कि किधर जाना चाहिए। कोहरे से हवा में ताज़गी थी, चलना आसान था, पर बूट तंग कर रहे थे, एक ओर से ज़्यादा घिसे हुए थे। भीलिन ने अपने बूट उतारकर फेंक दिए और नंगे पैर चलने लगा। एक पत्थर से दूसरे पर उछलता जाए और तारे देखता जाए। कस्तीलिन पीछे रहने लगा, बोला :

"ज़रा धीरे चलो न, कमबख़्त बूट सारे पांव में लग रहे हैं।"

"तो उतार दो न, ज़्यादा अच्छा रहेगा।"

कस्तीलिन नंगे पांव चला तो और भी ज़्यादा तकलीफ़ हुई : कंकड़ों से सारे पांव छलनी हो गए और वह पीछे ही पीछे रहता जाए। भीलिन ने उससे कहा :

"पांव छिल जाएंगे, तो ठीक भी हो जाएंगे, पर पकड़े गए, तो तातार मार डालेंगे।"

कस्तीलिन कुछ नहीं बोला, बस हांफता, कांखता चलता गया। काफ़ी देर तक वे निचाई में चलते रहे। अचानक दाईं ओर से कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आई। भीलिन रुक गया, इधर-उधर ग़ौर से देखा, पहाड़ी पर चढ़ने लगा, हाथों से टटोलकर देखा ; बोला :

"ओफ़, गलती हो गई। ज़्यादा दाएं को आ गए। यहां दूसरा गांव है, मैंने पहाड़ी से देखा था। हमें पीछे जाना चाहिए, बाएं की पहाड़ी के ऊपर। वहां जंगल होना चाहिए।"

कस्तीलिन बोला:

"थोड़ी देर तो ठहर जाओ, ज़रा आराम करने दो, मेरे पांव सारे ख़ूनोख़ून हो गए।"

"ओहो, कोई बात नहीं, ठीक हो जाएंगे। तुम हौले से कूदो न। ऐसे!"

और झीलिन पीछे, बाईं ओर को दौड़ने लगा, ऊपर पहाड़ी पर, जंगल में चला। कस्तीलिन आहें भरता जाए और पीछे छूटता जाए। झीलिन उसे झिड़कता और ख़ुद चलता जाता।

आख़िर वे पहाड़ी पर चढ़ गए। वहां सचमुच ही जंगल था। जंगल में घुसे, तो कांटों से सारे कपड़े फट गए। जंगल में उन्हें रास्ता मिला। वे उस ओर चल दिए।

"ठहरो!" रास्ते पर टाप सुनाई दी। वे रुक गए, कान लगाकर सुनने लगे। घोड़े की सी टाप सुनाई दी और रुक गई। वे चल दिए, तो फिर टाप सुनाई दी। वे रुक जाएं – तो वह भी रुक जाए। झीलिन रेंग-रेंगकर पास गया, रोशनी में देखा – सड़क पर कोई खड़ा था: पता नहीं घोड़ा था या क्या, और उसके ऊपर कुछ अजीब सा, आदमी की शक्ल का नहीं। झीलिन ने सुना – उसने फुफकार भरी। "क्या अजूबा है!" झीलिन ने धीरे से सीटी बजाई – वह बिजली की तरह जंगल की ओर लपका और जंगल में तड़तड़ होने लगी, मानो आंधी आई हो, सूखी टहनियां तोड़ रही हो।

कस्तीलिन तो डर के मारे थरथराने लगा। झीलिन हंसता जाए, बोला:

"अरे, यह तो बारहसिंगा था। सुन रहे हो कैसे सींगों से टहनियां तोड़ता जा रहा है। हम उससे डर रहे थे और वह हमसे।"

आगे चल दिए। उजाला होने में ज़्यादा देर न थी। पर उन्हें यह पता न था कि वे ठीक दिशा में जा रहे हैं या नहीं। झीलिन को लग रहा था कि इसी रास्ते उसे यहां लाया गया था, और क़िला यहां से कोई सात मील दूर होगा, पर कोई पक्की निशानी न थी और रात को पता भी तो नहीं चल सकता। ऐसे

ही चलते-चलते वह एक छोटे से मैदान तक पहुंचे। कस्तीलिन बैठ गया और बोला :

"तुम जो चाहो करो, पर मैं तो नहीं पहुंच पाऊंगा : टांगें नहीं चलतीं।"

झीलिन उसे मनाने लगा।

"नहीं, नहीं पहुंच पाऊंगा, नहीं चला जाता," वह बोला।

झीलिन को गुस्सा आ गया, उसने थू किया और कस्तीलिन को फटकारा।

"ठीक है, मैं अकेला चला जाऊंगा, बैठे रहो यहीं।"

कस्तीलिन उठा और चल दिया। कोई तीन मील तक वे चलते गए। जंगल में कोहरा और भी ज़्यादा घना था; सामने कुछ दिखाई नहीं देता था, तारे भी ज़रा-ज़रा ही दिख रहे थे।

सहसा उन्हें आगे से घोड़े की टाप सुनाई दी। नाल के पत्थरों से टकराने की आवाज़ आ रही थी। झीलिन पेट के बल लेट गया और ज़मीन को कान लगाकर सुनने लगा।

"हां, इधर ही कोई घुड़सवार आ रहा है।"

वे रास्ते से उतरकर झाड़ियों में छिप गए और इंतज़ार करने लगे। झीलिन रेंग-कर रास्ते के पास गया, देखा—घुड़सवार तातार आ रहा है, गाय ला रहा है, गुन-गुनाता जा रहा है। तातार गुज़र गया। झीलिन कस्तीलिन के पास लौट आया।

"बचा लिया भगवान ने, उठो चलें।"

कस्तीलिन उठने को हुआ, पर गिर गया।

"नहीं चल सकता, हे भगवान, नहीं चल सकता मैं, हिम्मत नहीं रही।"

वह भारी-भरकम आदमी था, पसीना आ गया था उसे और यहां जंगल में ठंडा क़ोहरा था, पांव भी फट गए थे—इसीलिए वह निढाल हो गया था। झीलिन ज़ोर लगाकर उसे उठाने लगा तो वह चिल्ला पड़ा :

"हाय दर्द होता है!"

झीलिन की बस जान सूख गई।

"चिल्लाते क्यों हो? तातार पास ही है, सुन लेगा तो?" मन ही मन सोचने लगा : "यह सचमुच ही टूट गया है; क्या करूं मैं इसका? साथी को छोड़कर जाना तो ठीक नहीं।" फिर बोला :

"अच्छा, उठो, मेरी पीठ पर बैठ जाओ, चल नहीं सकते, तो मैं उठा ले चलूंगा।"

उसने कस्तीलिन को पीठ पर बिठाया, जांघों तले से उसे पकड़ लिया और रास्ते पर आकर आगे चलने लगा।

"अरे, भगवान के वास्ते मेरा गला तो मत दबाओ, कंधों से पकड़े रखो।"

झीलिन को बड़ी मुश्किल हो रही थी – उसके पांव भी ख़ूनोख़ून थे और वह थक भी गया था। वह नीचे झुकता, कस्तीलिन को उछालता, ताकि वह पीठ पर ऊपर को बैठा रहे और आगे पांव घसीटने लगता।

तातार ने कस्तीलिन के चिल्लाने की आवाज़ सुन ली लगती थी। झीलिन ने सुना पीछे से कोई घोड़े पर आ रहा है, अपनी बोली में कुछ चिल्ला रहा है। झीलिन झाड़ियों की ओर लपका। तातार ने बंदूक निकाली, गोली चलाई – निशाना ठीक नहीं बैठा, अपनी बोली में चीखकर उसने कुछ कहा और घोड़ा वापस दौड़ा ले गया।

झीलिन बोला: "बस भई, अब गए हम! वह कमबख़्त तातारों को जमा कर लाएगा हमारा पीछा करने को। अगर हम दो मील दूर न भाग निकले, तो बस गए।" मन ही मन वह कस्तीलिन के बारे में सोच रहा था: "क्यों मैं यह बोझा अपने साथ ले आया। अकेला कब का निकल गया होता।"

कस्तीलिन बोला:

"जाओ, तुम अकेले चले जाओ। मेरे लिए क्यों मरते हो।"

"नहीं, अकेला नहीं जाऊंगा। साथी को छोड़ना ठीक नहीं।"

फिर से उसने कस्तीलिन को पीठ पर लादा और चल दिया। इस तरह वह कोई पौन मील चला होगा। जंगल-जंगल ही जा रहा था, जंगल का अंत न दिखता था। कोहरा छंटने लगा और मानो बादल छाने लगे – तारे दिखाई नहीं दे रहे थे। झीलिन का बुरा हाल हो रहा था।

आख़िर एक जगह पहुंचे: सड़क किनारे चश्मा था। वह रुक गया, कस्तीलिन को उतार दिया, बोला:

"थोड़ा आराम कर लूं, पानी पी लूं। आओ रोटी खा लें। अब तो थोड़ी ही दूर होना चाहिए।"

वह पानी पीने को झुका ही था, कि पीछे से टापें सुनाई दीं। वे फिर दाईं ओर लपके, ढलान पर झाड़ियों में दुबक गए।

ऊपर से तातारों की आवाज़ें आने लगीं। तातार उसी जगह रुके थे, जहां से वे रास्ते से दाईं ओर मुड़े थे। तातारों ने कुछ बातें कीं, फिर शुशकारने लगे। झाड़ियों में कुछ चटखा और एक अनजान कुत्ता सीधा उनकी ओर बढ़ आया। रुक गया और भौंकने लगा।

तातार भी बढ़ आए। उन्हें भी झीलिन नहीं जानता था। उन्होंने इन दोनों को पकड़कर बांध दिया, घोड़ों पर बिठाया और ले चले।

कोई दो मील गए थे कि मालिक अब्दुल और दो तातार मिले। उन्होंने तातारों से कुछ बात की, इन दोनों को अपने घोड़ों पर बिठाया और वापस गांव ले चले।

अब्दुल अब हंस नहीं रहा था और न इनसे कोई बात ही उसने की।

सुबह-तड़के उन्हें गांव ले आए। गली में बिठा दिया। लड़के जमा हो गए। पत्थरों, कोड़ों से उन्हें मारने और चीखने लगे।

तातार एक घेरे में जमा हुए। पहाड़ी के नीचे से वह बूढ़ा भी आया। बातें करने लगे। झीलिन ने सुना कि उनकी ही बातें हो रही हैं, कि क्या किया जाए उनका। कोई कह रहा था कि और दूर पहाड़ों में भेज देना चाहिए। पर बूढ़ा कह रहा था: "मार डालो।" अब्दुल नहीं मान रहा था, कहता था: "मैंने इनके लिए पैसे दिए हैं। मैं पैसे वसूल करके रहूंगा।" पर बूढ़ा कहता था: "कुछ नहीं देने-वेने के, बस कोई आफ़त ही खड़ी करेंगे। रूसियों को रोटी देना ही पाप है। मार डालो और बस बात ख़त्म।"

सब चले गए, तो मालिक झीलिन के पास आया, कहने लगा:

"अगर मुझे तुम्हारे बदले पैसे न मिले, तो मैं दो हफ़्ते बाद कोड़े मार-मारकर दम निकाल दूंगा और अगर तूने फिर से भागने की सोची, तो कुत्तों की मौत मरेगा। चिट्ठी लिख, अच्छी तरह लिख!"

नौकर ने उन्हें कागज़ लाकर दिया, उन्होंने चिट्ठियां लिख दीं। उन्हें बेड़ियां पहनाकर तातार मस्जिद के पार ले गए। वहां एक गड्ढा था कोई बारह फ़ुट गहरा। उन्हें वहां गड्ढे में उतार दिया गया।

(६)

अब उनका जीना बिल्कुल दूभर हो गया। बेड़ियां उतारी नहीं जाती थीं और बाहर भी नहीं निकाला जाता था। गड्ढे में ही उन्हें कच्ची रोटियां फेंक दी जाती थीं, कुत्तों की तरह और रस्सी से सुराही में पानी उतार देते थे। गड्ढे में बदबू, उमस और सीलन थी। कस्तीलिन तो बिल्कुल ही बीमार पड़ गया, फूल गया, सारे शरीर में टूटन होने लगी। वह कराहता रहता या सोता रहता। झीलिन भी गुमसुम हो गया: देख रहा था कि मामला बिल्कुल बिगड़ गया। कुछ समझ नहीं पा रहा था कि कैसे यहां से निकला जाए।

वह ज़मीन खोदने लगा, पर मिट्टी फेंकने की कोई जगह न थी; मालिक ने देख लिया और मार डालने की धमकी दी।

एक दिन वह गड्ढे में उकड़ूं बैठा था, आज़ाद ज़िंदगी के बारे में सोचकर उदास हो रहा था। अचानक सीधे उसके घुटनों पर एक रोटी आ गिरी, फिर दूसरी, और चैरियां भी गिरीं। ऊपर देखा, तो वहां दीना बैठी थी। दीना उसकी ओर देखकर हंसी और भाग गई। झीलिन सोचने लगा: "शायद दीना कुछ मदद कर दे।"

पर अगले दिन दीना नहीं आई। झीलिन को घोड़ों की टाप सुनाई दी। कुछ लोग गुज़रे और फिर तातार मस्जिद के पास जमा हो गए। वे चिल्ला रहे थे, बहस कर रहे थे, रूसियों का ज़िक्र कर रहे थे। बूढ़े की आवाज़ भी झीलिन को सुनाई दी। ठीक-ठीक तो उसकी समझ में नहीं आया, हां, इतना पता चला कि शायद रूसी कहीं पास ही आ गए हैं और तातारों को डर है कि कहीं गांव में न आ जाएं; और वे यह तय नहीं कर पा रहे कि बंदियों का क्या करें।

बातें करके सब चले गए। सहसा झीलिन ने सुना – ऊपर कुछ सरसराहट हुई। देखा: दीना बैठी थी, घुटने सिर से ऊपर दिख रहे थे, नीचे झुक गई, हंबेल के सिक्के लटक रहे थे, गड्ढे के ऊपर हिल रहे थे, आंखें तारों सी चमक रही थीं। बाजू में से पनीर की दो रोटियां निकालीं और फेंक दीं। झीलिन ने ले लीं और बोला:

"आई क्यों नहीं थी इतनी देर तक? मैंने तेरे लिए खिलौने बनाए हैं। यह ले!" और वह एक-एक करके ऊपर फेंकने लगा।

वह सिर हिला रही थी और उधर देख नहीं रही थी।

"रहने दो!" बोली। चुप बैठी रही, फिर बोली:

"इवान, तुझे मारना चाहते हैं।" और अपनी गर्दन पर हाथ फेरा।

"कौन मारना चाहता है?"

"अब्बा। बूढ़ों ने उसे कहा है। मुझे तुम पर तरस आता है।"

तब झीलिन ने कहा:

"अगर तुझे तरस आता है, तो तू मुझे बल्ली ला दे।"

उसने सिर हिला दिया कि नहीं हो सकता। उसने हाथ जोड़े।

"दीना, बच्ची, ला दे न!"

"नहीं ला सकती," वह बोली, "देख लेंगे, सब घर पर हैं।" और चली गई।

शाम हो गई। झीलिन बैठा सोच रहा था: "अब क्या होगा?" रह-रहकर वह ऊपर देखता। तारे दिख रहे थे, पर चांद अभी नहीं निकला था। मुल्ला ने अज़ान दी। चारों ओर सन्नाटा था। झीलिन को झपकी आने लगी। सोच रहा था: "डर रही होगी वह।"

अचानक उसके सिर पर मिट्टी गिरी: ऊपर देखा – बल्ली गड्ढे के दूसरे सिरे पर अटक रही थी। फिर नीचे आने लगी। झीलिन ख़ुश हो गया, हाथ बढ़ाकर बल्ली पकड़ ली, नीचे उतार ली। बल्ली मज़बूत और लंबी थी। उसने मालिक की छत पर पहले भी वह बल्ली रखी देखी थी।

ऊपर देखा: तारे छिटक गए थे; और गड्ढे के ऐन ऊपर अंधेरे में दीना की आंखें बिल्ली की आंखों सी चमक रही थीं। वह गड्ढे के सिरे पर झुक गई और फुसफुसाई:

"इवान, इवान!" ख़ुद मुंह के पास हाथ हिलाती जाए कि "धीरे बोल।"

"क्या?" झीलिन बोला।

"सब चले गए, बस दो जने घर पर हैं।"

झीलिन बोला:

"चल कस्तीलिन चलें, आख़िरी बार कोशिश करते हैं, मैं तुझे पीठ पर बिठा लूंगा।"

कस्तीलिन कुछ सुनना ही न चाहता था।

"नहीं, मेरी क़िस्मत में यहां से निकलना नहीं लिखा। कहां जाऊंगा मैं, करवट तक तो ली नहीं जाती?"

"अच्छा, तो भूल-चूक माफ़ करना।" दोनों ने एक दूसरे को चूमा।

झीलिन ने बल्ली पकड़ ली, दीना से कहा कि संभाले रखे और ऊपर चढ़ने लगा। दो बार उसका हाथ छूटा, बेड़ी तंग कर रही थी। कस्तीलिन ने उसे सहारा दिया, जैसे-तैसे वह ऊपर चढ़ गया। दीना अपने दुबले हाथों से उसे कमीज़ पकड़कर खींच रही थी, हंस रही थी।

झीलिन ने बल्ली निकाली और बोला:

"जा, इसे वापस रख आ, किसी ने देख लिया बल्ली नहीं है, तो तुझे मार डालेंगे।"

वह बल्ली ले चली। झीलिन पहाड़ी उतरने लगा। ढलान से उतरकर नुकीला पत्थर उठाया और बेड़ी का ताला निकालने की कोशिश करने लगा। ताला मज़बूत था, टूटता ही न था और हाथ भी तो ठीक नहीं बैठता था। पहाड़ी से किसी के दौड़ने, हौले से कूदते आने की आवाज़ आई। उसने सोचा: "दीना ही होगी।" दीना आई, पत्थर उठाया और बोली:

"लाओ, मैं करती हूं।"

घुटनों के बल बैठकर ताला तोड़ने लगी। पर हाथ तो दुबले-पतले थे, ज़रा भी ताकत नहीं। उसने पत्थर फेंक दिया और रो पड़ी। झीलिन फिर से ताला तोड़ने की कोशिश करने लगा, दीना उसके पास पंजों के बल बैठ गई, उसका कंधा पकड़ लिया। झीलिन ने मुड़कर देखा, बाईं ओर पहाड़ी के पीछे लाली छा गई थी, चांद उग रहा था। उसने सोचा: "चांद निकलने से पहले वह तंग घाटी पार कर लेनी चाहिए, जंगल तक पहुंच जाना चाहिए।" उठा, पत्थर फेंक दिया, बेड़ी पहने हुए ही सही पर चलना चाहिए।

"अच्छा, दीना," झीलिन बोला। "सारी उम्र तुझे याद रखूंगा।" दीना ने उसे पकड़ लिया, हाथों से टटोलने लगी, ढूंढ रही थी कि कहां रोटियां रखे। उसने रोटियां ले लीं, बोला:

"जीती रह, बच्ची। कौन तुझे अब गुड़ियां बना के देगा।" और उसका सिर सहलाया।

दीना के आंसू फूट पड़े, उसने मुंह हाथों से ढांप लिया और पहाड़ी पर दौड़ गई, बकरी की तरह फुदकती जा रही थी। अंधेरे में से उसकी चोटी में उलझ रहे सिक्कों की खनक ही आ रही थी।

झीलिन ने सलीब का निशान बनाया, हाथ से बेड़ी का ताला पकड़ा, ताकि वह खड़खड़ाए न और रास्ते पर चल दिया। बड़ी मुश्किल से पैर घसीटते हुए झीलिन उधर आसमान की ओर देखता जा रहा था, जिधर चांद निकल रहा था। उसने रास्ता पहचान लिया। अगर सीधे चला जाए तो कोई पांच मील का फ़ासला है। अब चांद निकलने से पहले जंगल पहुंच जाना चाहिए। उसने नदी पार की; पहाड़ी के पीछे रोशनी सफ़ेद हो गई, आसमान पर उजाला हो गया और तंग घाटी के एक ओर उजाला बढ़ता ही जा रहा था। छाया पहाड़ी तले रेंग रही थी, झीलिन के पास आती जा रही थी।

झीलिन पहाड़ी की छाया-छाया में चलता जा रहा था। वह जल्दी कर रहा था, पर चांद और भी तेज़ी से चढ़ रहा था; दाईं ओर के पेड़ों के शिखरों पर भी चांदनी पड़ने लगी। जंगल पास ही आ चला था, चांद भी पहाड़ी के पीछे से निकल आया, चारों ओर दिन सा उजाला हो गया। पेड़ों पर एक-एक पत्ती देखी जा सकती थी। पहाड़ियों पर चांदनी फैली हुई थी, सन्नाटा था मानो कहीं कोई जान न हो। बस नीचे से नदी की कलकल सुनाई दे रही थी।

झीलिन जंगल तक पहुंच गया, किसी से सामना नहीं हुआ। उसने जंगल में अंधेरी जगह ढूंढी और आराम करने बैठ गया।

आराम किया, रोटी खाई। एक पत्थर ढूंढ़कर, फिर से बेड़ी तोड़ने लगा। हाथ छिल गए, पर बेड़ी न टूटी। उठा और रास्ते पर चल दिया। कोई तीन फ़र्लांग चला होगा, निढाल हो गया – टांगें बुरी तरह दुख रही थीं। दस क़दम भरता और रुक जाता। सोचता जाता: "कोई बात नहीं, जब तक दम है चलता जाऊंगा। अगर बैठ गया, तो फिर उठ नहीं पाऊंगा। क़िले तक तो मैं पहुंच नहीं पाऊंगा, पौ फटते ही जंगल में कहीं छिपकर लेट जाऊंगा, दिन काट लूंगा और रात को फिर चल दूंगा।"

सारी रात चलता गया। बस दो घुड़सवार तातार रास्ते में आए, पर झीलिन ने दूर से ही उनकी आहट पा ली और पेड़ पीछे दुबक गया।

चांद फीका पड़ने लगा, ओस गिरी, भोर हो रही थी, पर झीलिन अभी जंगल के सिरे तक न पहुंचा था। मन ही मन कहने लगा: "बस तीस क़दम और चल लूं, फिर जंगल में मुड़ जाऊंगा और बैठ जाऊंगा।" तीस क़दम चला और देखा कि जंगल ख़त्म हो रहा है। जंगल के सिरे पर पहुंचा, बिल्कुल उजाला था; उसके सामने स्तेपी थी और किला मानो हथेली पर रखे हों। बाईं ओर पास ही पहाड़ी के नीचे, आग जल-बुझ रही थी, धुआं फैल रहा था और अलावों के पास लोग बैठे हुए थे।

झीलिन ने ग़ौर से देखा: बंदूकें चमक रही थीं – रूसी सिपाही थे।

झीलिन ख़ुश हो गया, आख़िरी ज़ोर लगाकर उधर चल दिया। मन ही मन सोचता जाए: "भगवान न करे यहां खुले मैदान में कोई घुड़सवार तातार देख ले, अपनों के पास ही हूं, पर बचकर न निकल पाऊंगा।"

सोचने की देर थी कि देखा: बाईं ओर टीले पर तीन तातार खड़े थे, कोई आठ बीघा दूर। उन्होंने झीलिन को देख लिया और घोड़े दौड़ाए। झीलिन का कलेजा सुन्न हो गया। हाथ हिलाने लगा, पूरे ज़ोर से चिल्लाया:

"बचाओ, भाइयो, बचाओ!"

रूसियों ने सुन लिया। घुड़सवार उछले और उसकी ओर घोड़े दौड़ा दिए – तातारों का रास्ता काटते हुए।

रूसी दूर थे, तातार पास। पर झीलिन ने भी सारा दम लगाया, बेड़ी को हाथ से संभाला और अपने लोगों की ओर बेतहाशा दौड़ा, सलीब का निशान बनाता जाए, चिल्लाता जाए:

"भाइयो! भाइयो! भाइयो!"

रूसी घुड़सवार कोई पंद्रह थे।

तातार डर गए – आधे रास्ते में ही रुकने लगे। और झीलिन अपने लोगों के पास पहुंच गया।

उन्होंने उसे घेर लिया, पूछने लगे: "कौन है? कहां से आया?" पर झीलिन को अपनी होश न थी, वह रोता जाए और बस कहता जाए:

"भाइयो! भाइयो!"

दूसरे सिपाही भी दौड़ आए, झीलिन को घेर लिया, कोई उसे रोटी दे, कोई खिचड़ी, कोई वोद्का; कोई ओवरकोट ओढ़ाने लगा और कोई बेड़ी तोड़ने।

अफ़सरों ने उसे पहचान लिया, क़िले में ले गये। झीलिन के सिपाही ख़ुश हो गए, साथी जमा हो गए।

झीलिन ने सारी आपबीती सुनाई और बोला: "लो, हो आया मैं घर, शादी कर आया! नहीं क़िस्मत में नहीं लिखा।"

और वह वहीं कोहकाफ़ में अफ़सरी करने को रह गया। कस्तीलिन को महीने भर बाद पांच हज़ार रूबल आने पर छोड़ा गया। बिल्कुल अधमरे को क़िले में लाए।

प्रकाशित हो चुकी है

गैदार अर्कादी, **चूक और गेक।** कहानी

अर्कादी गैदार (१६०४–१६४१) की यह कहानी सोवियत बाल साहित्य की एक सर्वोत्कृष्ट रचना है। विश्व की ६० भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है और इसपर फ़िल्म भी बनायी जा चुकी है। कहानी चूक और गेक नामक दो नन्हे भाइयों की है, जो मास्को से अपनी मां के साथ सुदूर ताइगा जा रहे हैं, जहां उनका पिता एक भूवैज्ञानिक खोज दल में काम कर रहा है। गैदार बड़ी विनोदपूर्ण शैली में बच्चों की यात्रा, उनकी शरारतों, साहसिक कार्यों, पिता के साथ मुलाक़ात, आदि के बारे में बताते हैं। पुस्तक की चित्रसज्जा सुप्रसिद्ध सोवियत ग्राफ़िककार, राज्य पुरस्कार विजेता अकादमी-शियन द० दुबीन्स्की ने की है।

प्रकाशित हो चुकी है

व० गलीश्किन।
समुंदर की गोद में।

पायोनियर शिविर आर्तेक की कहानियां। अनुवादक : मानवेन्द्र गुप्ता।

स्कूल की छोटी कक्षाओं के बच्चे ही आधुनिक सोवियत लेखक, वसीली गलीश्किन के नायक हैं। लेखक ने काले सागर के सुंदर तट पर स्थित आर्तेक नामक पायोनियर शिविर में बच्चों के जीवन का वर्णन किया है।

आर्तेक में बच्चों के बहुभाषी परिवार का चंचल जीवन मज़ेदार खेल-कूद और उत्सवों इत्यादि से भरा हुआ है। यहां पर सोवियत बच्चे और देश-विदेश से आये हुए बालक मैत्री-सूत्रों में बंधते रहते हैं।

यह पुस्तक सन् १९८७ में रादुगा प्रकाशन से प्रकाशित हो रही है।